क्या मैं परमेश्वर की योजना से अलग हूँ?

...जीवन हमेशा सरल नहीं होता।

कभी तो परमेश्वर की इच्छा पर चलना आनन्ददायक होता है तो कभी ऐसा करना कठिन होता है। इब्राहीम ने अपने जीवनकाल में ऐसे कठिन अवसरों का सामना किया था।

परमेश्वर ने इब्राहीम से प्रतिज्ञा की थी कि वह एक महान् जाति का पिता होगा। परन्तु वर्ष बीतते गये और यह प्रतिज्ञा पूरी नहीं हुई। जो योजना इब्राहीम और सारा ने परमेश्वर की प्रतिज्ञा को पूरी करने के लिए बनाई थी वह मनोव्यथा में समाप्त हो गई थी। तब परमेश्वर पुनः इब्राहीम से बोला और उसे अपनी प्रतिज्ञा का स्मरण दिलाया। अन्त में, वह प्रतिज्ञा इसहाक के आश्चर्यजनक ढंग से पैदा होने के द्वारा पूरी हुई। परन्तु इब्राहीम की परीक्षा लिए जाने का अन्त नहीं हो गया।

कुछ वर्षों बाद, परमेश्वर ने इब्राहीम से कहा इसहाक–पुत्र जिससे वह प्रेम करता था–का बलिदान परमेश्वर के निमित्त मोरिय्याह पर्वत पर कर। इब्राहीम के सामने, अपने मनोभावों, परिस्थितियों अथवा व्यक्तिगत इच्छा के विपरीत परमेश्वर की आज्ञा मानने की चुनौती थी। इब्राहीम ने इस चुनौती का सामना किया। उसने परमेश्वर की इच्छा का पालन किया और एक महान आश्चर्यकर्म का अनुभव किया; परमेश्वर ने इसहाक के बलिदान के स्थान पर एक मेढ़ा का प्रबन्ध किया (उत्पत्ति 22:1-19)।

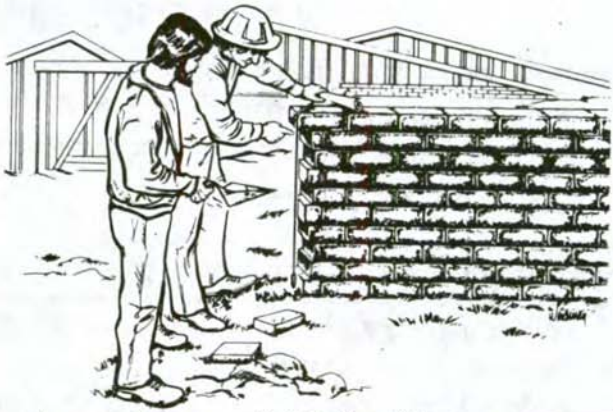

हो सकता है कि आप भी ऐसी ही चुनौती का सामना कर रहे होंगे। **परमेश्वर आपके जीवन में विशेष परिस्थितियों के द्वारा** आपके विश्वास की भी जाँच करता है।

इस पाठ में आप सीखेंगे कि हमारी परिस्थितियाँ कैसे हमें परमेश्वर की बनावट (योजना) से जोड़ती हैं। जब आप अध्ययन करते हैं, तो आप उन बातों की खोज करने पाएँगे, जिनमें, परमेश्वर आपके जीवन में अपनी योजना को पूरी करने हेतु परिस्थितियों का इस्तेमाल कर सकता है।

इस पाठ में आप सीखेंगे...

- परिस्थितियाँ प्रश्न उत्पन्न करती हैं।
- परिस्थितियाँ हमारे विश्वास की जाँच कर सकती हैं।
- परिस्थितियाँ हमें अनुशासित कर सकती हैं।
- परिस्थितियाँ हमें प्रोत्साहित कर सकती हैं।

यह पाठ आपकी सहायता करेगा...

- कारण बताएँ, परमेश्वर हमें कठिनाई और विरोध का सामना क्यों करने देता है।

- समझाएँ, जब हम अपने जीवन में परमेश्वर की योजना को पूरा होने देना चाहते हैं तभी कठिनाइयाँ आ खड़ी होती हैं।
- उन मूल्यों और लाभों का वर्णन करें जिन्हें हम कठिनाइयों के अनुभव के द्वारा प्राप्त कर सकते हैं।

परिस्थितियाँ प्रश्न उत्पन्न करती हैं

ऐसे समय आते हैं जब प्रतीत होता है कि परमेश्वर की इच्छा का परिस्थितियों के द्वारा अनुमोदन होता है। दूसरे समयों में, दिखाई देने वाली परिस्थितियाँ ऐसे काम कराती हैं, जिन्हें हम जानते हैं कि हमारे लिए करना बहुत कठिन है। क्या कठिनाइयाँ एक संकेत हैं कि हम परमेश्वर से अलग हो रहे हैं? क्या यह जानना संभव है कि परमेश्वर की इच्छा कितनी कठोर अथवा सरल प्रतीत होगी? जब यह असंभव दिखाई देती है तो क्या होता है, अर्थात् यदि सब बाहरी दशाएँ उसको करने में, जिसे हम सोचते हैं कि परमेश्वर हमसे चाहता है, विरोधात्मक हों तो क्या करें? आइए, उन परिस्थितियों पर ध्यान दें जिनसे हमारे लिए परमेश्वर की योजना अथवा इच्छा का सम्बन्ध है।

परिस्थितियाँ हमारे विश्वास की जाँच कर सकती हैं

विषयवस्तु 1. दो कारणों को पहिचानना कि परमेश्वर क्यों हमारे विश्वास की जाँच होने देता है।

हम ने सीखा है कि वस्तु की जाँच के द्वारा ही वह भरोसे लायक होती है। एक नाविक नाव को झील या बन्दरगाह में चलाने से पहिले उसकी अच्छी तरह से जाँच करता है अथवा समुद्र को पार करने के पहले ही जहाज़ की जाँच करना नाविक (कप्तान) का कर्त्तव्य होता है। एक पर्वतारोही पर्वत पर चढ़ने से पूर्व उस रस्सी

की जाँच करता है कि क्या वह इतनी मज़बूत है कि पर्वत की नुकीली चोटियों पर उसका वज़न सह सके।

कुछ अवसरों पर ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे विश्वास की परख के लिए परमेश्वर कठिन परिस्थितियों का प्रयोग करता है। वह हमारे विश्वास की जाँच करता है क्योंकि यही तो उससे हमारे सम्बन्ध की धुरी है—हमारे विश्वास के द्वारा ही परमेश्वर कार्य करता है। विश्वास बिना न तो हम उसकी योजना में बने रह सकते हैं और न ही उसे सन्तुष्ट कर सकते हैं (इब्रानियों 11:6)।

जाँच हमारे विश्वास को प्रकट करती है

कुछ लोग सोचते हैं कि वे परमेश्वर पर भरोसा (विश्वास) रखते हैं परन्तु सच्चाई तो यह है कि उन्होंने कभी भी परमेश्वर पर भरोसा किया ही नहीं। परिस्थितियाँ और घटनाएँ परमेश्वर में उनके विश्वास का समर्थन करती हैं और ये परमेश्वर की इच्छा को पूरा करने हेतु सहज बनाती हैं। बहुत से मामलों में लोग वही कर रहे हैं जो वे करना चाहते हैं, और सोचते हैं जो वे करना चाहते हैं वही परमेश्र की इच्छा होनी चाहिए। यह विश्वास कितना यकीन करने लायक है?

परमेश्वर यह देखना चाहता है कि हम वास्तव में कितना अधिक उस पर भरोसा रखते हैं। हमें यह दिखाने के लिए, वह बाह्य अनुमोदन और सहायता की अनुमति का तिरिस्कार कर सकता है। ऐसा लग सकता है कि यह आज्ञाकारिता को कठिन बनाता है; यदि हम वास्तव में परमेश्वर की इच्छा में पाए जाते हैं तो यह हमें आश्चर्यचकित कर सकता है।

परन्तु यदि हम परमेश्वर को हमारी जाँच नहीं करने देना चाहते और दिखाते ऐसे हैं कि हम उस पर कितना भरोसा रखते हैं—तो हम अपने विश्वास की निर्बलता को तब तक नहीं समझ सकते जब तक शैतान का हमला हम पर न हो।

पतरस को मसीह के प्रति अपनी ईमानदारी (वफ़ादारी) का निश्चय था। उसका अपना विचार यह था कि वह अन्यों से ज्यादा

श्रद्धालु (भक्त) है। यीशु द्वारा जाँच किए जाने से पहले पतरस ने उससे कहा था, "चाहे सब तुझे छोड़ें तो छोड़ें पर मैं तुझे कदापि न छोड़ूंगा!" (मत्ती 26:33)।

आपके लिए कार्य

1 नीचे दिए गए सन्दर्भों में पतरस के जीवन में विश्वास की परख से सम्बन्धित बातों को पढ़ें। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर अपनी नोट-बुक में लिखिए।

(अ) लूका 22:31, पतरस को यीशु कौन सी चेतावनी देता है?

(ब) मत्ती 26:34, पतरस से यीशु क्या करने को कहता है?

(स) मत्ती 26:35, पतरस ने क्या न करने के लिए कहा?

(द) मत्ती 26:69-75, पतरस ने क्या किया?

हम देखते हैं कि पतरस ने जिन कठिन परिस्थितियों का अनुभव किया वे उस समय में उसके निर्बल विश्वास (विश्वास में निर्बलता) को दर्शाती हैं। वह बाहरी मदद के बिना स्थिर बना नहीं रह सकता था।

परन्तु जाँच किए गए विश्वास का मूल्य है। प्रेरित याकूब ने इस मूल्य को समझ लिया था। वह उसका विवरण इस प्रकार से करता है:

> "हे मेरे भाइयो, जब तुम विभिन्न परीक्षाओं का सामना करते हो तो इसे बड़े आनन्द की बात समझो, यह जानते हुए कि तुम्हारे विश्वास के परखे जाने से धीरज उत्पन्न होता है" (याकूब 1:2-3)।

इन पदों में विशेष विचारों पर ध्यान दें—परीक्षाएँ, धीरज। ये विरोध और कठिनाई को दर्शाती हैं। फिर भी यह संकेत नहीं किया गया कि कठिनाई का मतलब यह है कि हम अपने लिए परमेश्वर की योजना से चूक गए हैं। सच तो यह है कि जब परीक्षाएँ आती हैं तो हमें स्वयं को भाग्यशाली समझना चाहिए।

आपके लिए कार्य

2 अपनी बाइबल में याकूब 1:2-4 पढ़िए। हमारे विश्वास की परख का अन्तिम परिणाम क्या है?

.....

परख (जाँच) हमारे विश्वास को मज़बूत बनाती है

नकारात्मक परिस्थितियों के द्वारा हमारे विश्वास की परख यह भी दिखा सकती है कि हम परमेश्वर पर कितना अधिक

विश्वास कर सकते हैं। यह हमारे विश्वास को दृढ़ करने में सहायक भी हो सकती है।

मोरिय्याह पर्वत पर इब्राहीम का अनुभव निश्चय ही विश्वास की महान विजय थी। बलिदान चढ़ाने के अन्तिम क्षण तक वह अपने पुत्र को ले आया था, तब परमेश्वर ने उसके पुत्र के स्थान पर मेढ़े को बलि करने का प्रबन्ध किया। उसने कठिन परिस्थिति में भी आज्ञा पालन की; उसके विश्वास की जाँच पूरी हुई और वह खरा निकला। अब उसने जान लिया कि परमेश्वर बलिदान का प्रबन्ध कर सकता है; उसने यह भी सीख लिया कि परमेश्वर उसके परिवार को बनाए रख सकता है।

1 शमूएल 17 में हम उस समय के बारे में पढ़ते हैं जब दाऊद ने गोलियत का सामना किया, जो इस्राएलियों का सबसे बड़ा शत्रु

था। दाऊद के समान लड़के के लिए यह असंभव था कि वह एक लम्बे-चौड़े योद्धा को परास्त कर सके! परन्तु जब दाऊद ने गोलियत की ललकार व चुनौती को सुना तो वह उससे लड़ने को तैयार था।

आपके लिए कार्य

3 । शमूएल 17:34-37 पढ़िए और सही उत्तर के अक्षर पर गोला बनाएँ। दाऊद गोलियत से लड़ने को तैयार था क्योंकि–

(अ) उसके कई भाइयों ने सोचा था कि वह जीत जाएगा।
(ब) गोलियत अधर्मी पलिश्ती था और दाऊद एक इस्राएली था।
(स) दाऊद ने सिंह और भालू से लड़ाई होने के समय से ही परमेश्वर पर भरोसा रखना सीख लिया था।

वे कौन सी परिस्थितियाँ हैं जिन्हें परमेश्वर आने देता है कि हमारे विश्वास की जाँच करे? हो सकता है कि खतरों और निराशाओं का सामना करना पड़े। हो सकता है कि हमारे चारों ओर ऐसे लोग हों जो हम पर भरोसा नहीं रखते। असुविधा या कष्ट हमारे लिए समस्या बन सकती है। हम जिन लक्ष्यों तक पहुंचने या उन्हें पूरा करने की अपेक्षा करते हैं, हो सकता है उन तक पहुंचने या पूरा होने में विलम्ब हो जाए। इन सबके द्वारा परमेश्वर हमारे विश्वास को परखता है कि हम उस पर कितना विश्वास करते हैं तथा वह हमें सिखाता है कि हम कहाँ चूक गए कहाँ कमज़ोर हैं कि हम और अधिक उस पर विश्वास करें।

आपके लिए कार्य

4 हमने दो कारणों का अध्ययन किया है कि परमेश्वर क्यों कठिन परिस्थितियों के द्वारा हमारे विश्वास की जाँच करता है। नीचे दिए गए वाक्यों में से उन वाक्यों के अक्षरों पर गोला बनाएँ जिनमें इन कारणों में से कोई एक बताया गया हो।

(अ) कभी-कभी हमें अपने विश्वास की वास्तविक शक्ति का प्रदर्शन करना होता है ताकि हम अपने विषय में छले न जाएं।

(ब) हमारे विश्वास की जाँच की गई जिससे कि यह प्रकट किया जाए कि हमें हमारे लिए परमेश्वर की जो योजना थी उससे हम चूक गए हैं।

(स) हमारे विश्वास की जाँच हो जाने के पश्चात् अब हम पहिले की अपेक्षा बड़ी-बड़ी चुनौतियों का सामना कर सकते हैं।

परिस्थितियाँ हमें अनुशासित कर सकती हैं

विषयवस्तु 2. कठिन से कठिन परिस्थितियाँ हमें कैसे अनुशासित कर सकती हैं उसके लिए उत्तम विश्लेषण का चुनना।

जब हम परमेश्वर की इच्छा पूरी करने के प्रयत्न में लगे रहते हैं तो कठिन परिस्थितियां जो हमारे जीवन में आती हैं—वे भी हमें

अनुशासित कर सकती हैं। इस अनुशासन का अभिप्राय है उस लक्ष्य की ओर लगाए रहना जो परमेश्वर ने हमारे लिए निर्धारित किया है। कुछ लोग सोचते हैं कि अनुशासन के लिए दण्ड आवश्यक नहीं। यह तो तब ज़रूरी हो जाता है जब सच्चे अनुशासन के पालन में असफल होते हैं। अनुशासन एक प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) है। यह विशेष कार्यकलापों को चुनना है जिससे कि लक्ष्य को पूरा किया जा सके।

खेलों में, अनुशासन का अर्थ है नियमों को पूरी तरह मानना जिससे कि जीत हासिल हो। नियमों के बाहर की गतिविधियाँ न केवल अनुशासनहीनता हैं परन्तु यह व्यर्थ ही शक्ति की हानि है और इससे हारने की संभावना बढ़ जाती है। इसलिए यह दण्डनीय है।

अनुशासन में नियमबद्ध कार्यक्रम सम्मिलित हो सकता है। खेलों में इसका अर्थ है कि खिलाड़ी शक्तिवान (मज़बूत) बनने के लिए अपनी सीमा से बाहर वर्जिश न करे।

अनुशासित होना और अनुशासित करना इन दोनों के सम्बन्ध को देखना आसान होता है। मसीह के बाहर शिष्य उसकी इच्छा के प्रति अनुशासित थे। जब हम उनके जीवन वृतान्त को पढ़ते हैं तो पाते हैं कि न केवल मसीह ने उन्हें कठिनाइयों में से होकर गुज़रने दिया, पर उन्हें कठिनाइयों में पड़ने दिया। ये अनुभव उनके प्रशिक्षण का ही भाग था।

वे भारी तूफ़ान के बीच मसीह के साथ नाव में थे, परन्तु ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मसीह इसके लिए कुछ नहीं कर रहा था। वह तो सो रहा था। (मरकुस 4:35-41)। उनमें से नौ शिष्य तो उस पर्वत पर छोड़ दिये गये थे जहाँ मसीह का रूपान्तरण हुआ था। वहाँ उनको एक दुष्ट-आत्मा ग्रसित लड़के से सामना करना पड़ा था (मरकुस 9:14-29)

आपके लिए कार्य

5 मरकुस 6:34-44 पढ़िये। तब अपनी नोट बुक में निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए।

(अ) चेलों ने किस कठिनाई का सामना किया था ?

(ब) यीशु उनसे क्या करने को कहता है?

(स) उनके पास कौन से साधन उपलब्ध थे?

(द) यीशु ने क्या किया ?

(य) परिणाम क्या हुआ ?

प्रत्येक नाकारात्मक, कठिन परिस्थितियों में से यीशु ने शिष्यों को उनकी सामर्थ्य के अनुसार ही लिया था। वह उनको सिखाता रहा था कि वे पूर्णरूपेण यीशु पर निर्भर रहना सीखें। वह उनका ध्यान अपनी ओर खींच रहा था और उनके सीमित दायरों से उनका ध्यान हटा रहा था।

हमें परमेश्वर की इच्छा के सम्बन्ध के प्रति, कठिनाइयों को हमारे मन में शंका का कारण नहीं बनने देना चाहिए। इसके बदले, हमें यह मालूम होना चाहिए कि हो सकता है कि परमेश्वर उन समस्याओं को अपने प्रति सही विचार—एक मन वाला बनाने हेतु इस्तेमाल कर रहा हो। इसीलिए परिस्थितियों पर विजय पाने की एक कुञ्जी यह है कि हम अपना ध्यान परमेश्वर की तरफ केन्द्रित करें

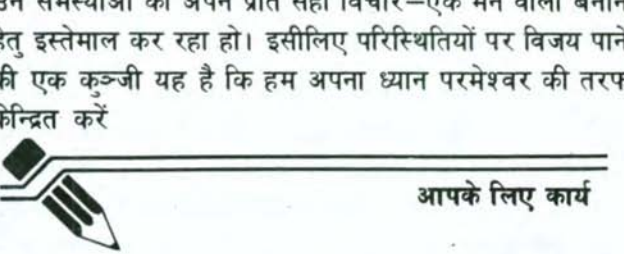

आपके लिए कार्य

6 कठिन परिस्थितियाँ हमें इस प्रकार अनुशासित करती हैं—

(अ) यह जानने में हमारी सहायता करती हैं कि हम परमेश्वर की इच्छा पर नहीं चल रहे हैं।

(ब) ये आवश्यक बनाती हैं कि हम पूरी तरह से परमेश्वर पर निर्भर हों।

(स) हमें दिखाती हैं कि हमारे अन्दर योग्यता है कि हम स्वयं समस्याओं का सामना करें।

(द) हम पर दण्ड लाती हैं जिससे कि हम जान सकें कि हम असफल हो गए हैं।

परिस्थितियाँ हमें प्रोत्साहित कर सकती हैं

विषयवस्तु 3. उन कथनों को जिनमें कारण दिए जाते हैं तथा कठिन परिस्थितियों के मूल्यों के बीच के अन्तर को समझाना।

यह सच है कि कठिन परिस्थितियाँ हमारे विश्वास की परख करतीं और हमें अनुशासित करती हैं। परन्तु ये समस्याएँ हमारे लिए प्रोत्साहन का कारण भी बन सकती हैं। निर्भर करता है कि उनके प्रति हमारी क्या प्रतिक्रिया होती है और हम परमेश्वर की इच्छा होने के बावत कितना जानते हैं। आइए, इस प्रोत्साहन के तीन पहलुओं पर विचार करें।

प्रमाण देना कि हम परमेश्वर के हैं

पहिला, कठिनाइयां प्रमाण दे सकती हैं कि हम परमेश्वर के हैं। पवित्रशास्त्र में उन दुष्ट-शक्तियों का स्पष्ट वर्णन किया गया है जो संसार में हैं। शैतान, मसीह के अनुयायियों का शत्रु है। वह ऐसे अवसरों की खोज में रहता है कि परमेश्वर के राज्य का विकास न होने पाए। शैतान यह सब जानबूझकर, ईर्ष्या के कारण और स्वैच्छा से करता है। यद्यपि उसकी सामर्थ समिति है, फिर भी

वह सामर्थशाली है। वह सामर्थशाली होने से कहीं अधिक कपटपूर्ण और छली है। वह झूठ का पिता है।

शैतान मसीहियों का विरोधी है और संसार के विधान (तन्त्र) का भी। यह विधान (तन्त्र) धार्मिकता पर आधारित नहीं है। यह तो छल, अत्याचार और अन्याय पर बना है। यह तो झूठ को सच बताने वाला है जहाँ मनुष्य बुरे को भला और भले को बुरा कहने से नहीं लजाते। यह ऐसा तन्त्र है जहाँ वायदे पूरे नहीं किए जाते, जिसके ज्ञान में सत्यता नहीं। यह ऐसा तन्त्र है जो परमेश्वर का विरोध करता है और परमेश्वर की सन्तान का भी विरोध करता है। यह ऐसा शासन-तन्त्र है जिसने परमेश्वर के पुत्र का इसलिए इन्कार किया क्योंकि वह धर्मी व निर्दोष था और तब उसे क्रूस पर चढ़ा दिया। उसकी धार्मिकता के कारण इस तन्त्र में घृणा जगी।

आपके लिए कार्य

7 यूहन्ना 15:18-20 पढ़िए और नीचे दिये गये वाक्य को पूरा कीजिए।

मसीह ने अपने शिष्यों को बताया था कि इस संसार ने उससे घृणा की है। उसने उनको चिताया कि संसार उनसे भी घृणा करेगा क्योंकि—

.....

जब परमेश्वर की सन्तान परमेश्वर की इच्छा पूरी करना आरंभ करता है तब वह क्या करे? वह दूषित (विकृत) करने वाले वातावरण में रहता है और सीधे मार्ग पर चलना चाहता है। अन्धकारपूर्ण संसार में वह प्रकाश का अनुसरण करना चाहता है।

क्या पवित्रशास्त्र परमेश्वर की इच्छा को इस तन्त्र या शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के रूप में दर्शाता है? दोनों ही युद्ध, तनाव, विरोध तथा मुकाबले के द्योतक हैं। मसीह ने कहा, "संसार में तुम्हें क्लेश होता है, परन्तु साहस रखो...मैंने संसार को जीत लिया है!" (यूहन्ना 16:33)

भले ही कठिनाई हमें आश्चर्यचकित क्यों न करे और हमें मज़बूर करे कि हम यह सोच लें कि परमेश्वर की इच्छा से चूक गए हैं तो भी यह इस बात का संकेत है कि मसीह की प्रतिज्ञा हमारे साथ है...और हम उसकी इच्छा में पाये जाते हैं। यह तब और भी सत्य हो जाता है जब कठिनाई या परेशानी हम पर आती है क्योंकि हमारा अन्तर्द्वन्द्व दुष्ट-तन्त्र और अपनी धार्मिकता के बीच होता है। धर्मी जीवन और दुष्ट (बुराई) के शासन के बीच विरोधाभास आने से ही विकट परिस्थिति का सामना करना पड़ता है।

लूका 6:20-26 में उस प्रोत्साहन पर ध्यान दीजिए जो चेलों को दिया गया था विशेषकर पद 20-23 में। उन्हें तो सीधे कठिनाइयों से उत्साह प्राप्त करना था! इसी समय, उस चेतावनी पर भी ध्यान दीजिए जो पद 24-26 में दी गई। ये चेतावनियाँ सीधे संसार के शासन-तन्त्र से अनुमति पाने से सम्बन्धित हैं।

आपके लिए कार्य

8 लूका 6:20-26 पढ़िए। प्रत्येक अनुभव का मिलान उस परिणाम से करें जहाँ यीशु ने कहा कि यह क्या लाएगा?

... (अ) ग़रीबी 1) एक सुखद परिणाम
... (ब) धन 2) एक दुःखद परिणाम
... (स) सब मनुष्यों की सहमति
... (द) शोक
... (य) मनुष्यों का घृणित (मनुष्यों द्वारा तिरिस्कृत)

कठिनाइयाँ हमें प्रोत्साहित कर सकती हैं। ये वास्तव में इस बात का संकेत बनती हैं कि हम परमेश्वर की इच्छा के अंतर्गत पाए जाते हैं। यह उस बात के चिन्ह नहीं हैं कि हम उससे वंचित हो गए हैं।

विजय के अवसर

दूसरी बात, कठिनाइयाँ हमें विजय पाने के अवसर प्रदान कर सकती हैं। ये कठिनाइयाँ तो विश्व तन्त्र की देन हैं और चूँकि हम संसार में रहते हैं इसलिए हमारे ऊपर क्लेश भी आते हैं। परन्तु मसीह ने इस विश्व-तन्त्र पर विजय पा ली है।

कठिनाइयाँ और विरोध परमेश्वर की इच्छा पूरी करने को असंभव नहीं बनाते। समस्याओं पर विजय प्राप्त की जा सकती है। ये तो विजय पाने को संभव बनाते है, क्योंकि जहाँ विजय हासिल होना है वहाँ विरोध भी अवश्य होना चाहिए। हम मसीह के द्वारा इन पर जय पाने वाले और विजेता हैं।

एक मनुष्य का चरित्र उसके शत्रुओं और उसके मित्रों का मूल्यांकन करने से भलीभाँति पंहचाना जा सकता है। बाइबल कहती है संसार से मित्रता करनी ठीक वैसा ही है जैसा कि परमेश्वर से शत्रुता करना (याकूब 4:4)। इसका अर्थ यह है कि यदि हम परमेश्वर के मित्र हैं तो हम संसार के शत्रु बनेंगे।

क्या एक विजेता हारे हुए से अपनी जीत का प्रमाण माँगता है? न ही हम यह चाहते हैं कि संसार के विधान (विश्व-तन्त्र) के

अनुमोदन या सहायता के द्वारा अपने परमेश्वर पर ध्यान देने के अनुशासन को खो दें। दूसरे शब्दों में, इन पर विजय पाने का अनुभव हमें परमेश्वर के पीछे चलने के लिए नया बल प्रदान करता है।

आपके लिए कार्य

9 प्रकाशित वाक्य 3:21 पढ़िए। मसीह किनके लिए प्रतिज्ञा करता है कि उसके सिंहासन पर बैठने का अधिकार उन्हें मिलेगा।

.....

विरोध से आत्म विश्वास

तीसरी बात, कठिनाइयाँ हमें आत्मविश्वास प्रदान कर सकती हैं क्योंकि हम परमेश्वर को प्रसन्न करने में लगे हुए हैं। हमने शैतान और विश्व-तन्त्र दोनों की समस्याओं को बताया था और यह भी कि किस प्रकार से ये समस्याएँ प्रोत्साहन का स्रोत बन सकती हैं। इसे पवित्रशास्त्र में "मानवीय स्वभाव", "पापी स्वभाव", अथवा "देह (शरीर)" कहा गया है। यह स्वयं में भौतिक शरीर नहीं है। यह तो हमारे अपने व्यक्तित्व का वह भाग है जो संसार और उसकी अभिलाषाओं से समझौता कर लेता है।

इतना ही पर्याप्त होना चाहिए कि हमारा शत्रु शैतान है। इसके अतिरिक्त हम पतित संसार और उस तन्त्र में रहते हैं जो

संसार देता है। परन्तु सबसे बड़ी कठिनाई तो यह है कि हमने परमेश्वर के शत्रु—हमारा मानवीय स्वभाव—से समझौता किया और उससे जुड़ गए हैं। हम अपने प्रयत्न से इस सम्बन्ध को नहीं तोड़ सकते, हमें तो इसको जीतना होगा, हाँ इस पर विजय प्राप्त करना है। परन्तु जीतने के लिए युद्ध (संघर्ष) भी होगा।

गलतियों 5 में शरीर के कामों अर्थात् मानवीय स्वभाव की सूची दी गई है। यह पूरी सूची नहीं है, परन्तु इनके नाम ही पर्याप्त हैं जिससे कि हम उन दूसरे कामों को पहिचान सकते हैं जिनके नाम इस सूची में नहीं दिए गए।

हम मानवीय स्वभाव या शरीर के विरोध के द्वारा कैसे प्रोत्साहित हो सकते हैं? यह तो हम जानते ही हैं कि शरीर और परमेश्वर के आत्मा में बिना रुके गहिरा संघर्ष (युद्ध) चलता रहता है—यह हमारे अन्दर आत्मविश्वास उत्पन्न करता है कि जब हम शरीर के अनुसार चलने से इनकार करते हैं तब हम परमेश्वर को प्रसन्न करने लगते हैं। यदि हम मात्र शरीर की लालसाओं के अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं तो फिर कोई युद्ध की या संघर्ष की स्थिति ही नहीं आएगी। शरीर स्वयं शरीर से युद्ध (संघर्ष) नहीं करता, युद्ध तो शरीर और आत्मा (परमेश्वर के आत्मा) के बीच चलता है।

आपके लिए कार्य

10 हमने उन कुछ मूल्यों अथवा लाभ (फायदों) के विषय में अध्ययन किया है जो कठिन परिस्थितियों का सामना करने से हमें मिल सकतें हैं। हमने उन कारणों का भी अध्ययन किया है कि ये कठिनाइयाँ क्यों हमारे सामने आती हैं। प्रथम

दो वाक्यों का उन कथनों से मिलान करें जिनमें इन वाक्यों का विवरण पाया जाता है। रिक्त स्थान में सही वाक्य वाला अंक लिखिए।

1) कठिनाई का मूल्य
2) कठिनाई के लिए कारण

... (अ) कठिनाइयाँ, मसीह के प्रति हमारी अपनी सीमाबद्धता को देखने में सहायता कर सकती हैं।

... (ब) मसीह तो शैतान, संसार और उसके तन्त्र (शासन-प्रणाली) का शत्रु है।

... (स) (पवित्र) आत्मा निरन्तर शरीर से युद्ध (संघर्ष) करता रहता है।

... (द) हमारे लिए संसार की घृणा हमें आश्वस्त करती है कि हम परमेश्वर के हैं।

... (य) हमारे मानवीय स्वभाव का विरोध हमें आत्मविश्वास प्रदान करता है कि हम मानवीय स्वभाव (शरीर) के अनुसार चलने से इनकार करते हैं और परमेश्वर को प्रसन्न करना चहते हैं।

ऐसे कई साधन हैं जिनमें परमेश्वर कठिन परिस्थितियों को, उसकी योजना का अनुसरण करने हेतु प्रयोग में ला सकता है। ये कठिन परिस्थितियाँ आपके विश्वास को बढ़ाने में सहायक हो सकती हैं। ये आपकी सहायता कर सकती हैं कि परमेश्वर पर निर्भर रहना सीखें। ये विजय के लिए अवसर प्रदान कर सकती हैं। विचार कीजिए मसीह ने क्या प्रतिज्ञा की—क्रूस, युद्ध, जाति, संसार के द्वारा तिरस्कार (घृणा), परीक्षाएँ तथा सताव। परन्तु इन प्रतिज्ञाओं पर भी ध्यान दें जो उसने की हैं—विजय, एक ताज, एक सिंहासन, श्वेत वस्त्र (चोगा) तथा पिता के द्वारा ग्रहण किया जाना। "जब तुम विभिन्न परीक्षाओं का सामना करते हो तो इसे बड़े आनन्द की बात समझो" (याकूब 1:2)।

अब तक आपने पहले चार पाठों का अध्ययन पूरा कर लिया है और अब आप अपने विद्यार्थी रिपोर्ट पुस्तिका के पहिले भाग के प्रश्नों के उत्तर देने के लिए तैयार हैं। पाठ 1 से 4 तक को दोहरा लीजिए तब उत्तर लिखनें हेतु पुस्तिका में दिए गए निर्देशों का पालन कीजिए। तब अपनी उत्तर-पुस्तिका दिए गए पते पर भेजिए।

अपने उत्तरों को जांच लें

6 (ब) परमेश्वर पर पूर्ण रूपेण निर्भर रहने के लिए यह हमारे लिए आवश्यक बनाती है।

1 (अ) उसने उन्हें बताया था कि शैतान उसकी परीक्षा करेगा।

(ब) उसने कहा था कि पतरस तीन बार यह कहेगा कि मैं उसे नहीं जानता।

(स) उसने कहा कि वह यह कभी नहीं कहेगा कि वह यीशु को नहीं जानता।

(द) उसने तीन बार कहा कि वह यीशु को नहीं जानता। (आपके उत्तर भी इसी तरह के होना चाहिए।)

7 वे परमेश्वर (उसके) हैं और संसार के नहीं हैं। (अथवा इसी तरह का उत्तर)

2 हम पूर्ण और सिद्ध बन गए हैं (अथवा इसी तरह का उत्तर)

8 (अ) एक सुखद परिणाम 1)

(ब) एक दुःखद परिणाम 2)

(स) एक दुःखद परिणाम 2)

(द) एक सुखद परिणाम 1)
(य) एक सुखद परिणाम 1)

3 (स) दाऊद ने परमेश्वर पर भरोसा रखना सीख लिया था...

9 उनको जो विजय हासिल करते हैं।

4 (अ) कभी-कभी हमें स्वयं को दिखाने की ज़रूरत पड़ती है...
(द) हमारे विश्वास की जाँच होने के पश्चात...

10 (अ) कठिनाई का मूल्य ... 1)
(ब) कठिनाई के लिए (का) कारण ... 2)
(स) कठिनाई के लिए कारण ... 2)
(द) कठिनाई का मूल्य ... 1)
(य) कठिनाई का मूल्य ... 1)

5 (अ) वहाँ एक बड़ी भीड़ थी जो भूखी थी।
(ब) "इन्हें कुछ खाने को दो" (पद 37)।
(स) पाँच रोटी और दो मछली।
(द) उसने भोजन पर आशीष माँगी और चेलों को दी कि लोगों में बाँट दें।
(य) प्रत्येक के लिए खाने को बहुत था।
(आपके उत्तर इसी तरह के होना चाहिए।)